वैश्वीकरण का भारत के गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम पर प्रभाव

■ श्रेया,
पी०पी०एन० कालेज, कानपुर

■ डा० सरोज रायजादा
प्रवक्ता-समाजशास्त्र
डी०जी० पी०जी० कालेज कानपुर।

वैश्वीकरण की अवधारणा का प्रयोग अत्यधिक व्यापक रूप से होने लगा है। अब तो कोई भी विचार विमर्श अधूरा है, जब तक वैश्वीकरण का नाम ले लिया जाए– राजनीति, व्यापार, मीडिया में बहुत हद् तक इस शब्द का प्रयोग किया जाने लगा है। सामान्य अर्थ में वैश्वीकरण का अर्थ है विश्व की सारी अर्थव्यवस्था को एकीकृत करना।

1947 में भारत स्वतंत्र हुआ। स्वतंत्र भारत ने मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाते हुए आर्थिक विकास का महायज्ञ प्रारम्भ किया। स्वतंत्रता की पूर्व संध्या को भारतीय अर्थव्यवस्था हमें जर्जर अवस्था में प्राप्त हुई थी। इसी कारण विकास के प्रारम्भिक दौर में हमें अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा। विगत पाँच दशकों की विकास यात्रा में इन समस्याओं का समाधान करने हेतु अनेक प्रयास किये गये। इसी के तहत 1991 में अर्थव्यवस्था के उदारीकरण और निजीकरण का मार्ग अपनाना पड़ा। दूसरे शब्दों में भारत तेजी से पूँजीवाद की ओर अग्रसर हो रहा है। विश्व बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष की वार्षिक बैठक चैक गणराज्य की राजधानी प्राग में 26 सितम्बर 2000 को सम्पन्न हुई। इस अवसर पर आई0एम0एफ0 प्रबन्ध निदेशक होर्स्ट कोहेलर और भारत के वित्तमंत्री यशवंत सिन्हा ने विश्व में गरीबों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने का आह्वान किया और वैश्वीकरण को अपनाने पर बल दिया, लेकिन काला चोंगा पहने हुए हजारों प्रदर्शनकारियों ने वैश्वीकरण को आर्थिक आतंकवाद की संज्ञा देते हुए बैठक स्थल के पास हिंसक प्रदर्शन किया।

वैश्वीकरण का लाभ समृद्ध देश, विशेषकर संसार के आठ समृद्ध देश अमेरिका, ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रांस, जापान, इटली, दक्षिण कोरिया और रूस तो बाजारवाद में सुधार–इन्फारमेशन टेक्नालॉजी या हाई टेक्नालॉजी का अपने ढंग से लाभ उठा लेते हैं– लेकिन तीसरी दुनिया के देश जैसे भारत अपनी अक्षमताओं के कारण इन लाभों को उठाने से वंचित रह जाता है और उनकी आर्थिक स्थिति का ढांचा लगातार कमजोर होता जाता है, जिससे गरीबी में वृद्धि होती जा रही है।

विकासशील सरकारों (खासकर भारत के संदर्भ में) की यह पहली प्राथमिकता होती है कि सबको और खासकर गरीबों को शिक्षा, स्वास्थ्य और पौष्टिक आहार उपलब्ध कराने के लिए भौतिक सुविधाओं का ज्यादा से ज्यादा विस्तार किया जाये। गरीबी उन्मूलन के लिए विभिन्न कार्यक्रम शुरू किये जाते हैं, ताकि गरीबों को ज्यादा लाभ मिल सके। इस बात में कोई शक नहीं कि आजादी के बाद गरीबों के लिए सामाजिक सेवाओं की उपलब्धता काफी बढ़ी है।

भारतीय अर्थव्यवस्था के सामने सबसे बड़ी चुनौती गरीबी का उन्मूलन करना है। इस दिशा में विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में प्रयास किए गए हैं और पांचवी पंचवर्षीय योजना से लेकर दसवीं पंचवर्षीय योजना तक गरीबी उन्मूलन योजनाओं के लक्ष्यों के केन्द्र में रहा है। किन्तु अभी भी समस्या बहुत ही गंभीर रूप में बनी हुई है। अतएव दसवीं पंचवर्षीय योजना में गरीबी उन्मूलन पर विशेष बल दिया गया है।

भारत में जो गरीबी है और जिसके उन्मूलन के लिए प्रयास देश में किया जा रहा है उसका स्वरूप विकसित देशों की गरीबी से बिल्कुल भिन्न हैं। विकसित देशों में भी गरीबी की समस्या है, किन्तु वह गरीबी की समस्या निरापेक्ष्य गरीबी (एब्सोल्यूट पावर्टी) न होकर सापेक्ष्य गरीबी (रिलेटिव पावर्टी) की है, जो मुख्य रूप से असमानता की समस्या है। असमानता की समस्या पूँजीवादी विकसित देशों के साथ–साथ समाजवादी देशों में भी रही है और पूर्ण समानता का लक्ष्य प्राप्त करना किसी भी विकसित देश में नहीं रहा है। और न वांछनीय ही माना जाता है। भारत में जो गरीबी है उसका स्वरूप सापेक्ष्य एवं निरपेक्ष्य दोनों हैं।

गरीबी का आंकलन का क्या मानदण्ड हो? इस संबंध में विशेषज्ञों के बीच मतों की भिन्नता नहीं है और आज भी है। प्रारम्भ में गरीबी को खाद्य सुरक्षा एवं संतुलित आहार के साथ जोड़ा जाता रहा किन्तु गरीबी के इस मानदण्ड में भारत में सातीवं पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ से ही परिवर्तन होने लगा। आज निरपेक्ष्य गरीबी को मात्र खाद्य सुरक्षा एवं संतुलित आहार की उपलब्धता तक सीमित न रखकर इसे व्यापक बनाते हुए बुनियादी आवश्यकताओं को भी गरीबी के मानदंडों में सम्मिलित कर लिया गया है। बुनियादी आवश्यकताओं में सुरक्षित पेय जल, प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा, प्राथमिक सर्वशिक्षा, सुरक्षित शरण स्थली एवं पोषण आहार को सम्मिलित कर दिया गया है। हालांकि समस्या की गम्भीरता को कम करने के उद्देश्य से भारत में लगभग एक स्थिर गरीबी रेखा के आधार पर गरीबों की संख्या का आंकलन किया जाता है। इस संबंध में योजना आयोग ने 1989 में निर्धनों की संख्या जानने के लिहाज से प्रोफेसर डी0टी0 लकरावाला की अध्यक्षता में एक विशेषज्ञ ग्रुप का गठन किया जिसका प्रतिवेदन 1993 में जमा हुआ। इस ग्रुप ने यह सिफारिश की कि 1973–74 के मूल्य सूचकांक के आधार पर ग्रामीण क्षेत्रों में जिन व्यक्तियों की आय 49.09 रूपये प्रतिमाह से कम हैं उन्हें ही गरीबी रेखा के नीचे माना जाए तथा शहरी क्षेत्र में जिनकी मासिक आय 56.64 रूपये से कम है, उन्हें गरीब माना जाए।

गरीबी उन्मूलन को अब मानवीय विकास के परिप्रेक्ष्य में देखा जा रहा है किन्तु भारतीय गरीबी रेखा सीमा को अभी इस रूप

में मौद्रिक रूप से मापा नहीं गया है। वर्तमान परिस्थिति में वे लोग गरीब नहीं माने जा सकते हैं, जिनकी आय पोषक खाद्य पदार्थों, प्राथमिक चिकित्सा, प्राथमिक शिक्षा, सामान्य आवास, सुरक्षित पेयजल आदि बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त हो।

अन्तर्राष्ट्रीय मानव विकास सूचकांक के लिहाज से ''यूनाइटेड नेशनल डेवलपमेंट प्रोग्राम्स'' की रिपोर्ट के अनुसार भारत का स्थान वर्ष 2000 में 173 देशों के समूह में 124वां है जिसे संतोषप्रद नहीं कहा जा सकता है।

राष्ट्रीय स्तर पर गरीबी सीमा रेखा के आधार पर गरीबों तथा गरीबी के औसत का जो आकलन किया गया है उसकी एक झलक निम्न तालिका से मिलती है। जिससे यह स्पष्ट होता है कि कुल आबादी में गरीबों का प्रतिशत 1973–74 के बाद लगातार कम हुआ है किन्तु 1999–2000 में यह औसत काफी ऊँचा है। 26.1 प्रतिशत लोग वर्ष 2000 में गरीबी रेखा के नीचे देश में रह रहे थे जबकि सातवीं पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य 1999–2000 तक गरीबी के औसत को 5 प्रतिशत पर लाना था।

तालिका

भारत में गरीबी का आकलन

अवधि	गरीबी प्रतिशत में			गरीबों की संख्या मिलियन में		
	ग्रामीण	शहरी	समेकित	ग्रामीण	शहरी	समेकित
1973-74	56.4	49.0	54.9	261.3	60.0	321.3
1977-78	53.1	45.2	51.3	264.3	64.6	328.9
1983	45.7	40.8	44.5	252.0	70.9	322.9
1987-88	39.1	38.2	39.9	231.9	75.2	307.1
1993-94	37.3	32.4	36.0	244.0	76.3	320.3
1999-2000	27.1	23.6	26.1	193.2	67.1	260.3
2007	21.1	15.1	19.3	170.5	49.6	220.1

इस तालिका में यह दिखलाया गया है कि दसवीं पंचवर्षीय योजना के अन्त तक भी औसत 19.3 प्रतिशत पर रहेगा। यह भी स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी क्षेत्रों की अपेक्षा गरीबी अधिक है। जहाँ तक गरीबों की कुल संख्या का सवाल है देश में वर्ष 1999–2000 में 260.3 मिलियन (26 करोड़ 32 लाख) लोग गरीबी सीमा के नीचे थे जिसमें 193.2 मिलियन (19 करोड़ 32 लाख) लोग ग्रामीण क्षेत्र में थे तथा शहरी क्षेत्र में गरीबों की संख्या 67.1 मिलियन (6 करोड़ 71 लाख) थी।

सुरक्षित पेयजल, साक्षरता, शौचालय, खाद्य सुविधाओं एवं बाल श्रमिकों से संबंधित आंकड़ों पर यदि ध्यान दिया जाए तो गरीबी की समस्या भारत में और भी गंभीर नजर आयेगी। 1991 की जनगणना के अनुसार देश में सुरक्षित पेयजल मात्र 62 प्रतिशत लोगों को ही उपलब्ध था जिसमें ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों की हिस्सेदारी क्रमशः 56 प्रतिशत एवं 81 प्रतिशत की थी। उल्लेखनीय है कि बहुत सी बीमारियाँ असुरक्षित पेयजल के चलते होती हैं ओर अभी सुरक्षित पेयजल उपलब्ध कराने में देश में बहुत कुछ करना बाकी है। सफाई एवं स्वास्थ्य के लिहाज से शौचालयों की भी उचित व्यवस्था आवश्यक मानी जाती है किन्तु इस दृष्टि से ग्रामीण क्षेत्र की स्थिति बहुत ही भयावह है। राष्ट्रीय सैम्पल सर्वे 1999–2000 के अनुसार 17.5 प्रतिशत घरों को ही ग्रामीण क्षेत्रों में यह सुविधा उपलब्ध है। प्राथमिक चिकित्सा के मामले में भी देश की स्थिति अच्छी नहीं है और अभी भी मलेरिया, कालाजार, टी0बी0, कुष्ठ, पोलियों जैसे भयावह रोगों से देश को मुक्ति नहीं मिल पाई है। जबकि सातवीं पंचवर्षीय योजना में ही ''हैल्थ फार ऑल'' का लक्ष्य रखा गया।

भूमण्डलीकरण से भारत की निरपेक्ष्य गरीबी की समस्या का समाधान तो सम्भव नहीं ही है और इससे आर्थिक असमानता भी बढ़ेगी जिसके फलस्वरूप सापेक्ष्य गरीबी की समस्या भी गंभीर होती जाएगी।

सामान्य धारणा के अनुसार विकास दर में जैसे–जैसे वृद्धि होगी, वैसे–वैसे रोजगार अवसरों एवं आय में वृद्धि होगी, जिससे गरीबी में कमी होनी चाहिए। किन्तु वास्तविकता यह है कि विकास दर में वृद्धि के साथ–साथ रोजगार अवसरों में वृद्धि बहुत कम होती है। आज रोजगार रहित विकास या कम से कम रोजगार के साथ विकास पूँजी निवेश का सिद्धान्त हो गया है। यही कारण है कि भारत की राष्ट्रीय आय में कृषि का योगदान 1980 के बाद तेजी से घट रहा है। 1980 में राष्ट्रीय आय में कृषि का हिस्सा 38. 1 प्रतिशत था जो 1990 में 31.0 प्रतिशत हो गया और 2001 में यह घटकर 24.7 प्रतिशत हो गया। दूसरी ओर सेवा क्षेत्र का योगदान राष्ट्रीय आय में 36.0 प्रतिशत था जो 1990 में 39.7 हुआ और 2001 में 48.8 प्रतिशत हो गया और अभी 50 प्रतिशत पर है। इस प्रकार नब्बे के दशक में सेवा क्षेत्र में तेजी से वृद्धि हुई तथा कृषि में कमी हुई। जहाँ तक उद्योग का सवाल है इसका योगदान स्थिर सा रहा। 1980 में उद्योग का योगदान 25.9 प्रतिशत था। 1990 में 29.3 प्रतिशत हो गया और 2001 में यह 26.4 प्रतिशत पर आ गया। इन आंकड़ों से यह भी स्पष्ट होता है कि नब्बे के दशक में जब उदारीकरण एवं भूमण्डलीकरण की लहर तेज हुई तक सेवा क्षेत्र में वृद्धि हुई। उल्लेखनीय है कि सेवा क्षेत्र, कृषि एवं उद्योग की तुलना में कम रोजगारोन्मुख है। यह प्रवृत्ति भारत में ही नहीं वरन चीन, इण्डोनेशिया कोरिया आदि देशों में भी देखने को मिलती है। इस प्रवृत्ति का मुख्य कारण यह है कि उदारीकरण के अन्तर्गत कम्पनियों

को पूरी छूट रहती है कि वे किस व्यवसाय, सेवा या उद्योग को चुने तथा किस तरह की उत्पादन तकनीक को अपनायें तथा किस क्षेत्र में अपने व्यवसाय का प्रसार करें जिसका परिणाम यह होता है कि वे पहले से विकसित विकास केन्द्र की ओर जाती है तथा ऐसी आधुनिकतम तकनीक को अपनाती है जिसमें श्रमिकों की आवश्यकता कम हो।

यह निष्कर्ष निकलता है कि विकास दर में वृद्धि होने से गरीबी उन्मूलन के कार्यक्रम में सहायता नहीं मिलेगी। उल्लेखनीय है कि भारत में सरकारी आंकड़ों के आधार पर भी 1999–2000 में 19 करोड़ 32 लाख गरीब ग्रामीण क्षेत्र में थे। ग्रामीण क्षेत्र का विकास कृषि, लघु एवं कुटीर उद्योग, ग्रामीण सड़कों के विकास एवं प्राथमिक शिक्षा एवं स्वास्थ्य केन्द्रों से संभव है, किन्तु विकास के ये सभी क्षेत्र बड़ी कम्पनियों को आकर्षित करने वाले नहीं है।

भारत में गरीबी की एक विचित्र विशेषता यह भी है कि रोजगार अवसरों के सृजन होने पर भी गरीबी घटती नहीं है। यह अपने आप में अटपटा सा लगता है, लेकिन यह एक वास्तविकता है। भारत के गरीब राज्यों में बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, असम एवं उत्तर प्रदेश का स्थान पहले आता है। इन राज्यों में बेरोजगारी की समस्या उतनी गंभीर नहीं है जितनी गंभीर तमिलनाडु, केरल, पंजाब एवं पश्चिमी बंगाल में है। कहने का अभिप्राय है कि अपेक्षाकृत अधिक विकसित राज्यों में बेरोजगारी अधिक एवं गरीब राज्य में अपेक्षाकृत कम है। अधिक रोजगार अवसरों के सृजन के साथ–साथ गरीबी में कमी होनी चाहिए थी। किन्तु ऐसा नहीं होने का कारण यह है कि गरीब राज्यों के श्रमिक गरीबी की मार से इतने पीड़ित हैं कि वे निम्न मजदूरी दर पर काम करने के लिए तैयार रहते हैं। वे बैठे रहने के बजाय बेगारी करने को विवश रहते हैं दूसरी ओर विकसित राज्यों के श्रमिक एक न्यूनतम मजदूरी दर से नीचे दर पर काम करने को तैयार नहीं होते हैं।

ऊँची विकास दर का अर्थ यह नहीं है कि बुनियादी सुविधायें भी स्वतः अधिक उपलब्ध हों। यह देखा गया है कि देश के वैसे क्षेत्रों जिन में और जहाँ लोगों की आय अधिक है किन्तु बुनियादी आवश्यक सेवाएं (सुरक्षित पेयजल, प्राथमिक शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधायें आदि) की उपलब्धता कम है। फलस्वरूप गरीबी उन्मूलन के लिए आवश्यक शर्तों की पूर्ति नहीं होती हैं और यह निजी क्षेत्र से उम्मीद नहीं की जा सकती है कि वे इन सुविधाओं को उपलब्ध कराएं। इसके लिए सरकारी प्रयास एवं कार्यक्रम आवश्यक हैं।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर यह माना जा सकता है कि भारत में गरीबी की जो स्थिति है उसका समाधान उदारीकरण एवं भूमण्डलीकरण से स्वतः सम्भव नहीं है। उदारीकरण से समस्या की गम्भीरता और बढ़ेगी ही।

संदर्भ

1. Economic Survey, 2002-03 : Government of India, Planning Commission, New Delhi, p.207.
2. Eighth Five Year Plan, 1992-97. Government of India, Planning Commission, New Delhi, p.7.
3. Ninth Five Year Plan. Government of India, Planning Commission, New Delhi, p.2.
4. Approach to the Ninth Five Year Plan, 1997-2002, Government of India, Planning Commission, New Delhi, pp. 17-18.
5. अमीन समीन : 'भूमण्डलीकरण के युग में पूँजीवाद' अनुवादक (राम कवीन्द्र सिंह ग्रन्थ शिल्पी)
6. Kumar Pruthi Raj : "Globalization & Development' Alfa Publications, New Delhi, 2008
7. पाण्डेय रामनरेश : 'विश्व व्यापार संगठन तथा भारतीय अर्थव्यवस्था' एटलांटिक पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
8. द्विवेदी, सरोज कुमार 'अमन', : वैश्वीकरण–चुनौतियां और अवसर, इण्डियन पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स दिल्ली।